भारतीय ज्ञान परंपरा: बौद्ध दर्शन और शिक्षा

श्री आनंद दास,
सहायक प्राध्यापक, श्री रामकृष्ण बी. टी. कॉलेज (Govt. Aided.), दार्जिलिंग,
संपर्क — 27 गांधी रोड बागमरी हाउस, दार्जिलिंग- 734101, पोस्ट ऑफिस- दार्जिलिंग,
संपर्क - anandpcdas@gmail.com, 9382918401, 9804551685.

शोध-सारांश - भारतीय ज्ञान परंपरा एक प्राचीन धारा है, जो सामाजिक मुद्दों को समझने और इन मुद्दों पर अनुसंधान करने में सहयोग किया है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था में बौद्ध दर्शन और उनकी शिक्षा प्रणाली के विभिन्न पक्षों का सूक्ष्मता से अवलोकन किया है। बौद्ध दर्शन और उसकी शिक्षा व्यवस्था ने भारतीय ज्ञान परंपरा को कितना प्रभावित किया और कितना समृद्ध बनाया; जिसे व्यवस्थित रूप से व्याख्यायित कर इसकी प्रासंगिकता सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य नवीन ज्ञान और विचार के जरिए मानव और समाज के लिए उपयोगी बनाना साथ ही चिंतन शक्ति, विश्लेषण शक्ति एवं सर्जनात्मक शक्ति को मज़बूती प्रदान करना है।

बीज शब्द — बौद्ध दर्शन, भारतीय ज्ञान परंपरा, भारतीय शिक्षा व्यवस्था, समकालीन शिक्षा।

प्रस्तावना - लगभग पांचवीं शताब्दी से भारतीय जनजीवन की परिवर्तित आवश्यकताओं की पूर्ति न कर सकने की वजह से धीरे-धीरे शिक्षा में विशृंखलता के चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगे थे। भारत के सौभाग्य से इस देश की पावन भूमि पर महात्मा गौतम बुद्ध अवतरित होकर बौद्ध शिक्षा को जन्म दिया। तथागत बुद्ध द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त और दिए गये उपदेश ही दर्शन के रूप में विद्यमान है। जब इन्हीं सिद्धांतों और उपदेशों को शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोग किया गया, तब उन्हें बौद्ध शिक्षा दर्शन के नाम से जाना गया। भारतीय ज्ञान परंपरा में बौद्ध दर्शन और उनकी शिक्षा व्यवस्था का विशेष स्थान है। भारतीय ज्ञान परंपरा को बौद्ध दर्शन और उनकी शिक्षा प्रणाली ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था का एक मानक रूप प्रदान किया था। बौद्ध दर्शन तथा बौद्धकालीन शिक्षा का सूत्रपात और प्रचार-प्रसार एक सामाजिक, धार्मिक तथा शैक्षणिक क्रांति के रूप में हुआ, जिसने एक सुनियोजित शिक्षा व्यवस्था एवं शिक्षा संस्थानों को जन्म दिया। बौद्ध धर्म ने शिक्षा के क्षेत्र में जो क्रांति लाई वह आज भी भारतीय ज्ञान परंपरा में जीवंत और प्रासंगिक है। वर्तमान संदर्भ में नई शिक्षा नीति 2020 ने भी प्राचीन ज्ञान परंपरा के महत्व को समझा है जिसके चलते ही भारत की समृद्ध ज्ञान परंपरा को केंद्र में लाने के लिए भरपूर प्रयास किया जा रहा है।

शोध प्रविधि - समस्त विचारों, तथ्यों व सूचनाओं को व्यवस्थित तरीक़े से प्रस्तुत करने का भरसक प्रयास किया है। अतीत से संबंधित सूचनाओं के साधनों का वैज्ञानिक पद्धति द्वारा परीक्षण कर प्राप्त तथ्यों को भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुरूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत लेख को विश्लेषणात्मक पद्धति, विवेचन पद्धति तथा ऐतिहासिक विधि तक समेटने की कोशिश किया है।

अध्ययन का विश्लेषण — भारतीय ज्ञान परंपरा में बौद्ध दर्शन और उनकी शिक्षा प्रणाली का गौरवशाली इतिहास रहा है। बौद्धकालीन शिक्षा-व्यवस्था को जानने, समझने व विश्लेषण करने से पूर्व तथागत बुद्ध से जुड़ी बुनियादी बातें और

उनके दर्शन को जानना अति आवश्यक है। संध्या सिन्हा के शब्दों में - "वैदिककाल से चली आ रही शिक्षा की धारा ब्राह्मण काल तक ख़ूब फली-फूली। छठी शताब्दी ई. पू. के आते-आते यह धारा धर्म के मूल-सिद्धांतों से भटककर कर्मकाण्डों और आडंबरों के जंजालों में उलझ गई। वर्ण-व्यवस्था जाति-व्यवस्था में परिणत हो गए 'ब्राह्मणत्व' और याज्ञिक कर्मकाण्डों, पशुबलि, नर-बलि इत्यादि ने सामाजिक राष्ट्रीय जीवन को जटिल और दुष्कर बना दिया। शिक्षा पर ब्राह्मणों और उनकी ही मनमानी का अधिकार हो गया था। इन परिस्थितियों एवं रूढ़ियों से व्याकुल होकर आम जनता जीवन के सामाजिक-धार्मिक क्षेत्रों में क्रांतिकारी सुधार की आवश्यकता महसूस कर रही थी। ऐसे ही जटिल दौर ई. पू. 563 में गौतम बुद्ध (सिद्धार्थ) का जन्म शाक्य वंश के राजपारिवार में लुम्बिनी (अब नेपाल में) नामक स्थान पर हुआ। इनके द्वारा प्रतिपादित धर्म, बौद्ध धर्म कहलाया तथा जिस शिक्षा-व्यवस्था की स्थापना की गई वह बौद्धकालीन शिक्षा व्यवस्था कहलायी।"1 ठीक इसी प्रकार एस.एन. मुखर्जी का मानना है कि "Religion was reduced to a complicated ritual to be performed by Brahmana priest in a language hardly intelligible to any but a few. The formalism and exclusiveness of the Brahmana system where largely responsible for the birth of Buddhism."2 प्रारंभ से ही गौतम बुद्ध शांत प्रकृति और चिंतनशील स्वभाव के थे। उनके पिता शुद्धोधन कपिलवस्तु के शाक्य गण के प्रधान व राजा थे। राजकुमारों के अनुरूप ऐश्वर्य एवं वैभव के माहौल में गौतम बुद्ध (सिद्धार्थ) की शिक्षा-दीक्षा और पालन-पोषण हुआ, परंतु ये विलास बहुल सुविधाएं व सुख-वैभव अपनी ओर ज़्यादा आकर्षित ना कर पाई। उनका हृदय दया, करुणा तथा मानवीय भावनाओं से परिपूर्ण था। घनश्याम जी अपने पुस्तक 'बुद्ध और वेदान्त' में लिखते हैं – "भगवान बुद्ध का सम्पूर्ण जीवन दया, करुणा, मैत्री, प्रेम, अहिंसा, बंधुत्व, समदृष्टि एवं समता से परिपूर्ण था। यदि उनके जीवन की प्रत्येक घटना का इस दृष्टि से विचार किया जाय तो उसकी एक ही शृंखला इसके विपरीत जाती न मिलेगी। तथागत की करुणा अथाह थी।"3 सांसारिक समस्याओं ने उनके जीवन का मार्ग बदल दिया। जरा, रोग तथा मृत्यु के दृश्यों ने सिद्धार्थ के अंतःकरण को झकझोर दिया। गृह त्याग करके इन कष्टों से ठोस समाधान पाने के उपायों को जानने के लिए उन्होंने कठोर तप किया और अंत में एक पीपल के वृक्ष के नीचे 'ज्ञान' प्राप्त हुआ। तभी से सिद्धार्थ 'बुद्ध' कहलाए। परम ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन्हें चार अवस्थाएं प्राप्त करनी पड़ी थी- 1.पहली अवस्था वितर्क तथा विचार प्रधान थी। 2.दूसरी अवस्था एकाग्रता थी। 3.तीसरी अवस्था समुचित तथा जागरूकता की थी। 4.चौथी अवस्था में समचित्तता एवं पवित्रता तथा समचित्तता एवं जागरूकता का संयोग हुआ। ज्ञान-प्राप्ति के पश्चात् वे सर्वप्रथम ऋषि पत्तन (सारनाथ) में उन्होंने अपना पहला उपदेश दिया था जिसे हम 'धर्मचक्र परिवर्तन' के नाम से जानते हैं। बुद्ध के ज्ञान तथा उपदेशों का सार 'चार आर्य सत्यों'(Four Noble Truths) में निहित है। वे इस प्रकार हैं- 1.दुःख, 2.दुःख समुदाय, 3.दुःख निरोध तथा 4.दुःख निरोध मार्ग। दुःख का मूल कारण तृष्णा है। तृष्णा अज्ञान के कारण उत्पन्न होती है। अज्ञान के दूर हो जाने से समाप्त हो जाती है। अतः ज्ञान ही दुःख का कारण है। बुद्ध ने दुःख दूर करने के लिए अष्टांगिक मार्ग दिखाया है - सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाक, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीविका, सम्यक् प्रयास, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि। बौद्ध दर्शन में मूल्यों को तीन भागों में विभाजित किया गया है- शील, समाधि और प्रज्ञा। इन्हें 'त्रिरत्न' भी कहते हैं। 'शील' का अर्थ है- सात्विक कर्म, 'समाधि' का अर्थ है- चित्त की नैसर्गिक एकाग्रता तथा 'प्रज्ञा' का अर्थ है - सत्य का साक्षात्कार। इसमें सदाचार को विशेष महत्व प्रदान किया गया है। तथागत बुद्ध ने 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' को दृष्टि में रखकर अपने उपदेश सरल स्थानीय (पाली) भाषा में दिए थे। 'आत्म दीपो भव' का आदर्श अपनाने की शिक्षा दी, साथ ही तृष्णा रहित नैतिक आचरण पर मुख्य जोर दिया था।

पारलौकिकता की जगह इहलौकिकता को महत्व दिया, इंद्रिय-निग्रह एवं कठोरता के स्थान पर मध्यम मार्ग का सिद्धांत अपनाया। कालांतर में बौद्ध धर्म दो भागों- हीनयान और महायान में विभाजित हो गया। गुरुसरनदास त्यागी अपने शब्दों में बया करते हैं कि "जैन दर्शन के समान बौद्ध दर्शन भी प्रारम्भ में आचार-शास्त्र के ही रूप का था। बाद में बुद्ध के शिष्यों ने आध्यात्मिक रूप देकर उसके एक दार्शनिक शास्त्र बनाया। वस्तुतः दर्शनशास्त्र के दो अंग होते हैं- प्रथम, आचार या कर्मकाण्ड तथा दूसरा ज्ञानकांड या आध्यात्मिक चिंतन। इनमें पहले आचार के नियमों का पालन करना आवश्यक है। तत्पश्चात् आध्यात्मिक चिंतन का अवसर आता है। उपासना द्वारा अन्तःकरण की शुद्धि होने पर ही आध्यात्मिक विचार को समझने की शक्ति मनुष्य में आ सकती है।"4

भारतीय ज्ञान परंपरा में बौद्धकालीन शिक्षा-व्यवस्था ही एक प्रथम ऐसी व्यवस्था बन कर उभरी जो न केवल व्यवस्थित व सुसंगठित व्यवस्था की स्थापना की बल्कि औपचारीक शिक्षा का भी मार्ग प्रशस्त किया। पूनम मदान अपने पुस्तक 'शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधारगत परिप्रेक्ष्य' में लिखतीं हैं- "सर्वप्रथम हमें बौद्ध शिक्षा प्रणाली में लोकतांत्रिक प्रणाली के बीज देखने को मिलते हैं। उन्होंने शिक्षा पर सभी का अधिकार बताया और जनसामान्य के लिए शिक्षा के द्वार खोल दिए, किंतु उच्च शिक्षा में योग्यता को महत्व दिया। यदि आज हम उच्च शिक्षा के क्षेत्र में यह प्रावधान लागू करें तो निश्चित ही शिक्षा में गुणात्मक सुधार होगा। अतः यह कहा जा सकता है कि भारत में शैक्षिक प्रशासन, शैक्षिक संगठन विद्यालय एवं विश्वविद्यालय शिक्षा की शुरुआत कर बौद्धों ने वर्तमान शिक्षा की नींव रख दी थी।"5 बौद्धकालीन शिक्षा संस्कार दो तरह से दिखाई देते हैं- प्रव्रज्जा और उपसम्पदा। भारतीय ज्ञान परंपरा में प्राचीन काल के समान बौद्ध काल में भी दो स्तर की शिक्षा की व्यवस्था थी, जिसे निम्नलिखित रूप में दृष्टिपात कर सकते हैं-

1.सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा (Public Elementary Education)
2.उच्च शिक्षा (Higher Education).

1. सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा (Public Elementary Education): बौद्धकालीन शिक्षा-व्यवस्था में प्राथमिक शिक्षा के द्वार सभी के लिए खुले थे। 'जातक कथाओं' के अध्ययन से हमें यह ज्ञात होता है कि प्राथमिक स्तर की शिक्षा केवल बौद्ध धर्मावालम्बियों को नहीं, वरन् सभी जातियों के बच्चों को उपलब्ध थी। यह शिक्षा मठों अथवा बौद्ध विहारों में दी जाती थी। प्रारंभ में यह शिक्षा पूर्णतया धार्मिक थी;समयानुसार लौकिक शिक्षा की भी व्यवस्था की गई थी। ह्वेनसांग (Hiuen Tsang) और इत्सिंग (I-Tsing) के लेखों में बौद्धकालीन प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश की आयु 6 वर्ष दिखाई देती है। प्रारंभिक शिक्षा के लिए बच्चों को प्रथम छः माह सिद्धिरस्तु (Siddhirastu) नामक बालपोथी पढ़नी पड़ती थी। इस पोथी में 12 अध्याय और 49 वर्ण माला के अक्षर थे, जिनको विभिन्न क्रम में रखकर 300 से अधिक श्लोकों की रचना की गई थी। 16 माह बाद बालकों को पांच विद्याओं की शिक्षा दी जाती थी - शब्द विद्या (Grammar), तर्क विद्या (Logic), चिकित्सा विद्या (Medicine), आध्यात्म विद्या (Metaphysics) और शिल्प-स्थान विद्या (Arts and Crafts)। शिक्षण के लिए शिक्षक काठ की तख्ती पर वर्णमाला के अक्षरों को लिखकर उच्चारण करते थे, उसके बाद छात्र अनुसरण करके उस विषय को कंठस्थ करते थे। अल्बर्ट फ़िटके के अनुसार- "शिक्षण लकड़ी की तख्ती पर वर्णमाला के अक्षरों को लिखता था और उनका उच्चारण करता था। बालक शिक्षक के उच्चारण का अनुकरण करते थे। इस प्रकार, जब कुछ समय के बाद छात्रों को अक्षरों का ज्ञान हो जाता था, तब वे उनको लिखते थे। पाठ्य-विषय के शिक्षण में अध्यापक आगे-आगे बोलता था और

बालक उसके कथन को उस समय तक दोहराते रहते थे, जब तक उनको पाठ्य-विषय कंठस्थ नहीं हो जाता था। इस प्रकार, शिक्षण विधि पूर्णतया मौखिक थी।"6 इस प्रकार वे मौखिक शिक्षण विधि को फॉलो करते थे, जिनकी भाषा पाली हुआ करती थी।

2. उच्च शिक्षा (Higher Education) : उच्च शिक्षा के द्वार सभी धर्मों और जातियों के छात्रों के लिए समान रूप से खुले हुए थे। प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् उच्च शिक्षा में प्रवेश कर सकते थे, जिसकी साधारणतया आयु बारह वर्ष की होती थी ताकि छात्र प्राचीन परंपरा के अनुसार पच्चीस वर्ष की आयु में किसी व्यवसाय या रोज़गारी का अवसर प्राप्त करके गृहस्थ जीवन व्यतीत कर सकें। उच्च शिक्षा में दो प्रकार के शिक्षा प्रचलित थीं - धार्मिक तथा लौकिक। धार्मिक विषयों में बौद्ध धर्म, साहित्य, त्रिपिटक, विनय, धम्म आदि की जीवनोपयोगी-व्यावहारिक शिक्षा दी जाती थी; वहीं लौकिक विषयों के पाठ्यक्रम में साहित्य, तर्क शास्त्र, न्याय शास्त्र, चिकित्सा शास्त्र आदि की शिक्षा दी जाती थी। वैसे उच्च शिक्षा का माध्यम सामान्य रूप से पाली भाषा थी, परंतु वैदिक साहित्य की शिक्षा संस्कृत माध्यम से दी जाती थी। इसके अतिरिक्त देश की अन्य प्रचलित भाषाओं का भी प्रयोग कर सकते थे।

शिक्षा के केंद्र - बौद्धकालीन शिक्षा-व्यवस्था में शिक्षा का मुख्य केंद्र मठ अथवा बौद्ध विहार था। छात्रों को निशुल्क शिक्षा, छात्रावास, भोजन, वस्त्र, चिकित्सा आदि की सुविधा प्रदान की जाती थी। कुछ मठों और बौद्ध विहारों ने तो विश्वविद्यालय के रूप में विकसित होकर इतनी ख्याति प्राप्त कर ली थी कि देश की सीमा से आगे बढ़कर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाई। अध्ययन करने के लिए चीन, जापान, नेपाल, कोरिया, तिब्बत, थाईलैंड, इंडोनेशिया, जावा, लंका आदि देशों के छात्र-छात्राएं भारत आते थे। इन छात्रों ने पठन-पाठन के साथ-साथ प्रमुख भारतीय ग्रन्थों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद भी किया था। डॉ॰ ए॰ एस॰ अल्तेकर के अनुसार "मठों ने उच्च शिक्षा में अपनी योग्यता से कोरिया, चीन, तिब्बत और जावा जैसे सुदूर देशों के छात्रों को की आकर्षित करके भारत की अंतरराष्ट्रीय ख्याति को ऊंचा उठा दिया।"7 बौद्ध काल में कई ऐसे विश्वविद्यालय विकसित हुए, जो वैश्वक पटल पर ज्ञान का केंद्र बनें; वे निम्नलिखित हैं- नालंदा विश्वविद्यालय, वल्लभी विश्वविद्यालय, तक्षशिला विश्वविद्यालय, विक्रमशिला विश्वविद्यालय, जागद्दल विश्वविद्यालय, ओदंतपुरी विश्वविद्यालय तथा सोमपुरा महाविहार, घटिका अग्रहार तथा ब्रह्मपुरी शिक्षा केंद्र इसके अतिरिक्त कई बौद्ध मठों या विहारों में शिक्षा की व्यवस्था थी।

शिक्षक (Teacher) - भारतीय ज्ञान परंपरा के बौद्ध शिक्षा दर्शन में शिक्षक का एक महत्वपूर्ण स्थान है। बौद्ध दर्शन व प्रणाली के अनुसार शिक्षक हो सकता है 'चार आर्य सत्यों'(Four Noble Truths) को ग्रहण कर लिया हो और अष्टांगिक मार्ग के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करता हो। बौद्ध दर्शन में दो प्रकार के शिक्षक का उल्लेख है- 1.उपाध्याय और 2.आचार्य। 'उपाध्याय' महाज्ञानी और अपने विषय का विशेषज्ञ होता था, जो भिक्षुओं को शास्त्र-सिद्धांत की शिक्षा देते थे। वहीं 'आचार्य' आचरण की शिक्षा देते थे साथ ही भिक्षुओं के आचरण की देख-रेख भी करते थे। ना उसका उत्तरदायित्व था। दोनों शिक्षकों को बौद्ध संघ के नियमों का कठोरता से पालन करना पड़ता था। शिक्षक का कर्त्तव्य अपने छात्रों के साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार के साथ-साथ मानवीय एवं आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शन करना। इस प्रकार हम देखते हैं कि उपाध्याय का कार्य अध्ययन-अध्यापन करना था वहीं आचार्य का कार्य छात्रों के अनुशासन को बनाए रखना था, साथ ही शिक्षकों के

अनुशासन को भी देखना था।**शिक्षार्थी (Student) -** बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली में छात्रों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण और कठोर अनुशासनयुक्त थी, जिन्हें 'श्रमण' या 'सामनेर' भी कहा जाता था। बौद्ध दर्शन के प्रतित्य समुत्पाद सिद्धांत के अनुसार छात्रों का अतीत एक समान नहीं होता है, उनमें विभिन्नताएं पाई जाती है। यही वजह है कि उनके अध्ययन क्षमताओं में भी समानता नहीं होती है, प्रत्येक छात्र के स्तर के अनुरूप ही पाठ्यक्रम और अध्ययन क्रियाओं का संयोजन करना चाहिए। बौद्ध काल में प्रव्रज्जा संस्कार द्वारा शिक्षा का आरंभ होता था। इसमें बालक सिर मुड़ाकर पवित्रता धारण करता था और गुरु उससे तीन प्रतिज्ञाएं कराता था-

'बुद्धं शरणं गच्छामि। धम्मं शरणं गच्छामि। संघं शरणं गच्छामि।'

तत्पश्चात् उसका संघ में प्रवेश होता था। इस अवसर पर छात्र को दस आदेश दिए जाते थे; वे निम्नलिखित हैं- 1.जीव हिंसा न करना, 2.किसी की वस्तु न लेना, 3.अशुद्ध आचरण से दूर रहना, 4.असत्य भाषण न करना, 5.मादक पदार्थों का सेवन न करना, 6.कुसमय भोजन न करना, 7.किसी की निंदा न करना, 8.नृत्य-गायन से दूर रहना, 9.सुगंधित व शृंगारिक वस्तुओं का उपयोग न करना, 10.चांदी बहुमूल्य वस्तुओं का दान न लेना। ये आदेश 'दस सिक्खा पदानि' कहलाते थे। वे गुरु की देख-रेख में शिक्षा प्राप्त करते थे। अतः संक्षेप में हम कह सकते हैं कि छात्र केवल ज्ञान प्राप्त ही नहीं करते थे, बल्कि वे एक अनुशासित, विनम्र और नैतिक जीवन जीने वाले साधक भी थे। उनका जीवन गुरु-शिष्य की परंपरा से जुड़ा था और संघ के नियमों से बँधा हुआ था, जिसका एक मात्र उद्देश्य सर्वांगीण विकास करना था।

शिक्षण विधि - वैदिक काल की भांति बौद्ध काल में शिक्षण विधि मौखिक ही थी, जिसमें स्वाध्याय, अभ्यास, प्रवचन, भाषण, श्रवण, कंठस्थिकरण, मनन और चिंतन आदि विधियों का उल्लेख मिलता है। साथ ही प्रश्नोत्तर विधि, उपदेश विधि, व्याख्यान विधि, संवाद विधि, वाद-विवाद विधि, चर्चा विधि व्याख्या विधि एवं सम्यक समाधि भी प्रचलित थी। अग्रशिष्य प्रणाली (Monitorial System), भ्रमण या देशाटन एवं प्रकृति निरीक्षण (Excursion and Observation), पुस्तक अध्ययन विधि एवं प्रवचन-सम्मेलन विधि का प्रयोग किया जाता था। संजीव कुमार शुक्ला और शिल्पी काटियार अपने किताब 'भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास एवं इसकी चुनौतियाँ' में लिखते हैं- "बौद्ध युग में प्राय: शिक्षण विधियां मौखिक थीं। यद्यपि लेखन प्रक्रिया का प्रारंभ हो चुका था। प्रश्नोत्तर, व्याख्यान, तर्क तथा वाद-विवाद शिक्षक के मुख्य साधन थे। विद्यार्थी विषय-वस्तु को कंठस्थ किया करते थे। इस शिक्षण-व्यवस्था में चिंतन-मनन तथा स्वाध्याय को भी समुचित स्थान प्राप्त था। धार्मिक चर्चा, गोष्ठी, परिषद् एवं विद्वत आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता था।"8 इस प्रकार बौद्धकालीन शिक्षा दर्शन का शिक्षणशास्त्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

बौद्ध काल में शिक्षा-व्यवस्था अपनी पराकाष्ठा पर थी। कपूरचंद जैन ने 'भारतीय शिक्षा का इतिहास' पुस्तक में बहुत ही महत्वपूर्ण बात बताते हैं कि - "बौद्ध युगीन शिक्षा संस्थाओं के संचालन का आधार प्रमुखतया जनतंत्रीय था। बिना किसी भेद-भाव के यहां स्त्री-पुरुषों को शिक्षा प्रदान की जाती थी, वे चाहे किसी भी वर्ण के क्यों न हों। इन विश्वविद्यालयों में सुदूर विदेशों के छात्र अध्ययन करने आते थे।"9 बौद्ध काल ने भारतीय ज्ञान परंपरा की बुनियाद रखने में विशेष भूमिका निभाई है। तत्कालीन शिक्षा-व्यवस्था व विश्वविद्यालय ने ऐसी ज्ञान की एक ऐसी व्यवस्था क़ायम की थी, जो आज़ भी बहुत प्रासंगिक है। तत्कालीन शिक्षा-व्यवस्था ने ही व्याकरण पाणिनी, राजनीतिज्ञ चाणक्य, अर्थशास्त्रीय कौटिल्य,

महात्मा बुद्ध के व्यक्तिगत चिकित्सक जीवक एवं सम्राट चंद्रगुप्त और पुष्यमित्र जैसे महान व्यक्तित्व दिया है। इसी काल में स्त्रियों की शिक्षा के भी मार्ग खुले शिक्षित स्त्रियों में निम्नांकित के नाम उल्लेखनीय हैं- बौद्ध धर्म की प्रसिद्ध प्रचारिकायें सुभा, अनुपमा एवं सुमेधा, कवयित्री के रूप में कालिदास के बाद मानी जाने वाली विजयंका तथा सम्राट अशोक की बहन संघमित्रा। तक्षशिला विश्वविद्यालय में ही आखेट, चिकित्सा, धनुर विद्या, इंद्रजाल, हस्तिज्ञान, भविष्य कथन, शारीरिक लक्षणों का अर्थ, पशुओं की बोलियां समझने का ज्ञान और इंद्रिय संबंधी कार्यों पर नियंत्रण करने की कला जैसी शिक्षा दी जाती थी। वैज्ञानिक शिक्षा का उल्लेख मिलिंद पान्हा में देखने को मिलता है। इसी युग में कई प्रकार की शिक्षा दी जाती थी जिनमें भवन निर्माण कला, मूर्तिकला व चित्रकला की शिक्षा थी जो आज़ बौद्ध विहार, स्तूप, नालंदा और विक्रमशिला की विशालकाय इमारतें भवन निर्माण कला की सजीव प्रमाण हैं। अजंता और एलोरा के भित्ति-चित्र, मूर्तिकला और चित्रकला इस प्रगति के आज भी उदाहरण मिलते हैं। इसी जमाने में व्यावसायिक शिक्षा भी प्रदान की जाती थी जिसमें हस्तशिल्पों की कला, सूत काटने, कपड़ा बुनने वस्त्र सीने, लेखन कला, और पशुपालन इसके अतिरिक्त कृषि, वाणिज्य तथा अन्य कई प्रकार की लाभप्रद व्यवसायों की शिक्षा की सुंदर व्यवस्था थी; ताकि वे अपनी जीविका का सरलता से उपार्जन कर सकें।

निष्कर्ष - बौद्धकालीन शिक्षा का योगदान देश की परवर्ती शिक्षा प्रणाली में अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। शैक्षिक संस्थाओं का जितना मजबूत सुगठन बौद्धयुगीन शिक्षा में हुआ, उतना पूर्व में कभी नहीं हुआ था। बौद्ध दर्शन और उनकी शिक्षा-व्यवस्था ने अंतर्राष्ट्रीयता एवं विश्वबंधुता की जिस भावना का सूत्रपात किया वह आज भी ज़िंदा है। बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली केवल अकादमिक या सैद्धांतिक ज्ञान नहीं देते, बल्कि व्यक्ति के शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, आध्यात्मिक तथा सर्वांगीण विकास करने में विशेष सहयोग करते थे। यह शिक्षा नैतिक मूल्यों, अनुशासन और व्यावहारिक कौशल पर जोर देती थी, जिसने इसे एक आदर्शवादी प्रणाली के रूप में ला खड़ा कर दिया। इस प्रकार बौद्धकालीन शिक्षा का पाठ्यक्रम व्यापक, व्यावहारिक एवं जीवन उपयोगी था। इसके अतिरिक्त पर्यटन, सम्मेलन तथा विद्वानों से शास्त्रार्थ का भी उल्लेख प्राप्त होता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि भारतीय ज्ञान परंपरा को समृद्धशाली बनाने में बौद्धकालीन शिक्षा-व्यवस्था का महत्वपूर्ण योगदान रहा है जो निःशुल्क, विस्तृत उद्देश्यपूर्ण और संस्कार प्रधान आधारित थी।

सहायक संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. सिन्हा संध्या, भारत में शिक्षा का विकास, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण- 2014-15, आगरा, पृष्ठ संख्या – 20.

2. पाठक पी०डी०, त्यागी गुरसरनदास, भारतीय शिक्षा का इतिहास, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, नवीन संस्करण- 2019/20, आगरा, पृष्ठ संख्या – 27.

3. घनश्याम, बुद्ध और वेदान्त, गुप्ता कम्यूनिकेशन (प्रकाशक), प्रथम संस्करण- 2019, दिल्ली, पृष्ठ संख्या - 9.

4. त्यागी गुरुसरनदास, शिक्षा के आधुनिक सामान्य सिद्धान्त, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, प्रथम संस्करण- 2014-15, आगरा, पृष्ठ संख्या – 225.

5. मदान पूनम, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधारगत परिप्रेक्ष्य, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, नवीन संस्करण- 2021-22, आगरा, पृष्ठ संख्या – 98.

6. शुक्ला कुमार संजीव, काटियार शिल्पी, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास एवं इसकी चुनौतियाँ, राखी प्रकाशन प्रा.लि., संस्करण- 2017, आगरा, पृष्ठ संख्या – 18.

7. वही, पृष्ठ संख्या – 18.

8. वही, पृष्ठ संख्या – 23.

9. जैन कपूरचंद, भारतीय शिक्षा का इतिहास, विनोद पुस्तक मंदिर, पंद्रहवां संस्करण- 1986, आगरा, पृष्ठ संख्या – 24.

श्री आनंद दास,
सहायक प्राध्यापक, श्री रामकृष्ण बी. टी. कॉलेज (Govt. Aid-ed.), दार्जिलिंग,
संपर्क – 27 गांधी रोड बागमरी हाउस, दार्जिलिंग- 734101, पोस्ट ऑफिस- दार्जिलिंग,
संपर्क - anandpcdas@gmail.com, 9382918401,